मूल्य : 25 रुपये

वर्ष : 2, अंक : 8, अक्तूबर–दिसंबर, 2010

पारस-परखान

हिन्दी काव्य की समस्त विधाओं की प्रतिनिधि एवं संग्रहणीय अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिकी

पारस-बेला न्यास

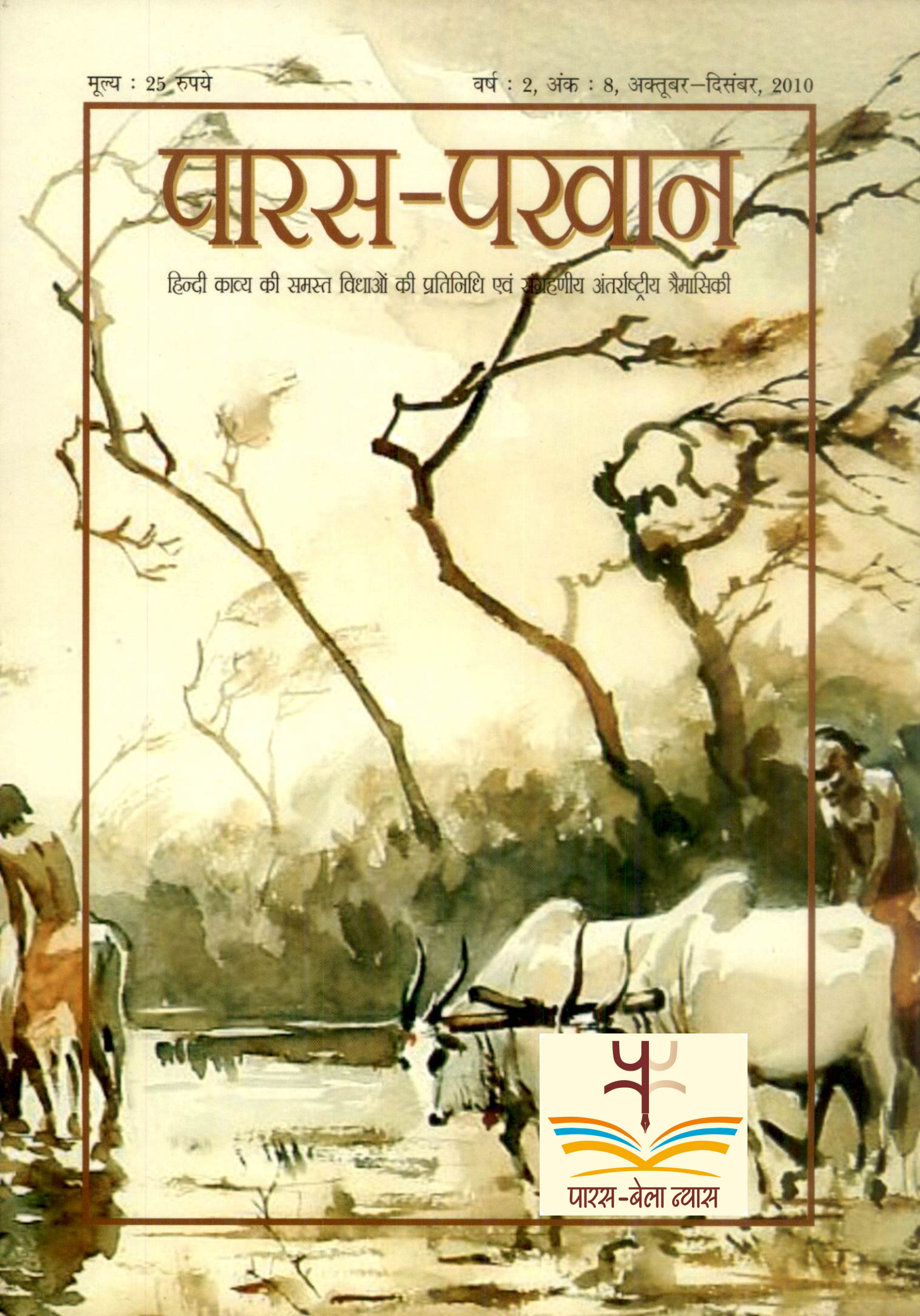

पारस शिखर सम्मान
समारोह की कुछ झलकियाँ

वर्ष–2, अंक–8, अक्तूबर–दिसंबर, 2010

मूल्य : 25 रुपये

अनुक्रमणिका

पारस-पखान

(हिंदी काव्य की समस्त विधाओं की प्रतिनिधि एवं संग्रहणीय अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिकी)

संपादकीय 2

पाठकों की पाती 3

श्रद्धा-सुमन

बाबू जी तेरे वियोग में — *डॉ. अनिल कुमार पाठक* 4

किसान — प. पारसनाथ पाठक 'प्रसून' 5

भारत-दुर्दशा — *भारतेन्दु हरिश्चन्द्र* 6

आँसू (काव्यांश) — *जयशंकर प्रसाद* 7

भारत माता — *सुमित्रानंदन पंत* 8

मैं नीर भरी दुख की बदली — *महादेवी वर्मा* 9

एक चिड़ा और एक चिड़ी... — *जयप्रकाश नारायण* 10

आज के बिछुड़े — *पं. नरेन्द्र शर्मा* 12

समय के सारथी

कारवाँ गुजर गया — *गोपालदास नीरज* 14

काजू भुनी प्लेट में व्हिस्की गिलास में — *अदम गोंडवी* 16

सारा देश हमारा — *बाल कवि बैरागी* 17

गुमशुदा — *मंगलेश डबराल* 19

वो नहीं मेरा मगर — *दीप्ति नवल* 20

तुम क्या दोगे देश... — *वीरेन्द्र प्रकाश गुप्त 'अंशुमाली'* 21

ताना बाना — *उदय प्रकाश* 22

देख प्रकृति की ओर — *शास्त्री नित्यगोपाल कटारे* 23

ग़जल — *सर्वेश चन्दौसवी* 24

नेहरू के प्रति — *जे.पी. तिवारी* 25

क्यों गाएं — *चंद्रभानु मिश्र* 26

तो क्यूं कुछ कहा नहीं? — *शिवकुमार बिलग्रामी* 27

अपूर्णता — *नवीन कुमार झा* 28

नवजीवन — *राकेश कौशिक* 30

प्रवासी के बोल

कुछ चेहरे — *नीना मुखर्जी* 31

फसादो दर्द — *अब्बास रज़ा अल्वी* 32

शत-शत नमन — *वीणा चौधरी सिंह* 33

वो एक चाँद-सा चेहरा — *चाँद हदियाबादी* 34

जब भी कोई कहानी लिखना — *उषा राजे सक्सेना* 35

नारी-स्वर

समाज के ठेकेदार — *गार्गी शर्मा* 36

नवांकुर

मत रोको मुझे — *कुँअर आमोद* 37

अखबारों से : पारस शिखर सम्मान 38

संपादक

डॉ. सुनील जोगी

आपके सुझावों और रचनाओं का स्वागत है–

kavi**sunil**jogi@gmail.com

संरक्षक

डॉ. एल.पी. पाण्डेय;
श्री अभिमन्यु कुमार पाठक;
श्री अरुण कुमार पाठक;
श्री राजेश प्रकाश;
डॉ. अनिल कुमार;
डॉ. अशोक मधुप।

लेआउट एवं टाइपसेटिंग :

इंडिका इन्फोमीडिया, जनकपुरी, नई दिल्ली –110058

मूल्य : 25 रुपए

वार्षिक : 100 रुपए

पंचवार्षिक : 450 रुपए

आजीवन : 5,000 रुपए

विदेशों में : $ 5

(एक अंक)

प्रवासी संपादकीय सलाहकार

डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल (नार्वे)

श्री ब्रह्म शर्मा (सिंगापुर)

श्री सी. एम. सरदार (मस्कट)

संपादकीय कार्यालय

आर-101 ए, गीता अपार्टमेन्ट

खिड़की एक्सटेन्शन,

मालवीय नगर

नयी दिल्ली –110017

दूरभाष –98110-05255

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक एवं प्रकाशक **प्रसून प्रतिष्ठान** के लिए **डॉ. अनिल कुमार** द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, 257, गोलागंज, लखनऊ में मुद्रित एवं सी-49, बटलर पैलेस कॉलोनी, जॉपलिंग रोड, लखनऊ से प्रकाशित। संपादक **–डॉ. सुनील जोगी**।

'पारस-पखान' में प्रकाशित रचनाओं के रचयिताओं के विचार अपने हैं। विवादास्पद मामले लखनऊ न्यायालय के अधीन होंगे। संपादन एवं संचालन पूर्णतया अवैतनिक और अव्यावसायिक।

संपादकीय

वर्ष 2010 का अक्टूबर-दिसम्बर का अंक आपके हाथों में है। वर्ष 2010 में कई महत्त्वपूर्ण घटनाएं हुईं, लेकिन हमारे लिए जो सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, वह है अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा की भारत यात्रा। ओबामा दंपत्ति भारत आये और उन्होंने दिल खोलकर भारत के साथ अमेरिकी दोस्ती का पैगाम दिया। यह भारत के जनमानस को झंकृत करने वाली एक यादगार यात्रा थी।

आप सोच रहे होंगे ओबामा की यात्रा का साहित्य से क्या लेना-देना; मगर लेना-देना है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। हमारे समाज में जो घटित होता है वही साहित्य में परिलक्षित होता है। साहित्य जहां जीवन विकृतियों को उजागर करता है वहीं जीवन मूल्यों को प्रतिष्ठापित भी करता है। ओबामा ने संसद में अपने दिए गये भाषण में जहां एक ओर विश्व में विद्यमान विकृतियों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया, वहीं उन्होंने जीवन मूल्यों और लोकतांत्रिक मूल्यों की बात भी की।

हमारे देश मे लोकतंत्र है और हमें इस पर गर्व भी है। लोकतंत्र ने क्या भारत की तस्वीर बदल दी है? भारत क्या आज अपनी दुर्दशा पर नहीं रो रहा है? आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने 'भारत-दुर्दशा' नाम से एक कविता लिखी थी। इस कविता का हम इस अंक में पुनर्प्रकाशन कर रहे हैं ताकि पाठक स्वयं इस बात का अभिज्ञान ले सकें कि सैकड़ों वर्षों बाद भारत में कितना परिवर्तन आया है।

इस अंक में हमने छायावादी युग के पुरोधा कवियों की रचनाओं को भी शामिल किया है। आज हम भले ही अभावों के दौर में न रह रहे हों लेकिन रिक्तता का दौर यथावत है। सुधी पाठकों का ध्यान इसी ओर आकर्षित करने के लिए जयशंकर प्रसाद जी की कालजयी रचना 'आंसू' के काव्यांशों को इस अंक में पुनर्प्रकाशित कर रहे हैं। इसी प्रकार महादेवी वर्मा की रचना 'मैं नीर भरी दुःख की बादल' और सुमित्रानंदन पंत की कालजयी रचना 'भारत माता' को भी शामिल किया गया है।

समय के सारथी स्तम्भ के अंतर्गत हमने गोपालदास नीरज की रचना 'कारवां गुजर गया' तथा बालकवि बैरागी की रचना 'सारा देश हमारा' को भी शामिल किया है। इनसे इतर हमने कुछ और ख्यातिप्राप्त कवियों की रचनाओं को भी शामिल किया है। विदेशों में रह रहे भारतीयों के हृदय उद्‌गारों को भी सदैव की भांति हमने 'प्रवासी के बोल' स्तम्भ में जगह दी है। आशा है कि यह अंक आपको रुचिकर लगेगा और सदैव की भांति आप ढेर सारे पत्र लिखकर हमें अपनी प्रतिक्रिया से अवगत कराएंगे।

पत्रिका में सम्मिलित सभी रचनाकारों के प्रति हम आभार व्यक्त करते हैं और आशा करते हैं कि हमें आपका निरंतर सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

–डॉ. सुनील जोगी
(संपादक)
मोबा. : 09811005255
ई-मेल : kavi**sunil**jogi@gmail.com

पाठकों की पाती

माननीय संपादक जी,

पारस-पखान का सातवां अंक पढ़ा तो मैं एकदम गद्‌गद हो गयी। इस अंक में आपने मेरे कई पसंदीदा कवियों की रचनाएं प्रकाशित की हैं। गोपाल दास 'नीरज' का गीत 'छिप छिप अश्रु बहाने वालो' अत्यधिक प्रेरक लगा। डॉ. अशोक मधुप का गीत 'छुअन पुष्पगंधा बन जाए' तथा डा. विष्णु सक्सेना का गीत 'रेत पर नाम' भी अत्यधिक भावप्रवण हैं। मैं अपने बचपन में प्रदीप जी का गीत 'साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल' सुनती रहती थी लेकिन इस पूरे गीत को न तो कभी सुना था और न पढ़ा था। आज पहली बार *पारस-पखान* पत्रिका के माध्यम से इस गीत को पूरा पढ़ पा रही हूं। इसके लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद!

बिन्दुबाला सिंह, 418, मीडिया टाइम्स अपार्टमेंट, इंदिरापुरम, गाजियाबाद

महोदय,

मैंने पहली बार *पारस-पखान* पत्रिका पढ़ी। लेकिन पहली बार ही पढ़कर लगा कि यह पत्रिका हिन्दी काव्य की दूसरी पत्रिकाओं से हटकर है। इसमें हिन्दी के नामचीन कवियों की कविताओं का पुनर्प्रकाशन कर आप एक सराहनीय कार्य कर रहे हैं। अक्सर कवियों की कविताएं एक बार प्रकाशित होकर विलुप्त हो जाती हैं, ढूंढ़े नहीं मिलतीं। अच्छी कविता पढ़ने का मन करता है पर नहीं मिलती। इसमें आप अच्छी कविताओं को पुनर्प्रकाशित करते हैं तो अच्छी कविताओं को पढ़ने की क्षुधा शांत हो जाती है। संभव हो सके तो आप अच्छे नए कवियों की अप्रकाशित कविताओं को भी अधिक से अधिक प्रकाशित करें।

राजेश पाण्डेय, गोल मार्केट, नई दिल्ली

आदरणीय संपादक महोदय,

मैं विगत एक वर्ष से *पारस-पखान* पत्रिका की पाठक हूं। मैं महादेवी वर्मा की जन्मभूमि फर्रूखाबाद से हूं। इस पत्रिका में आप पुराने

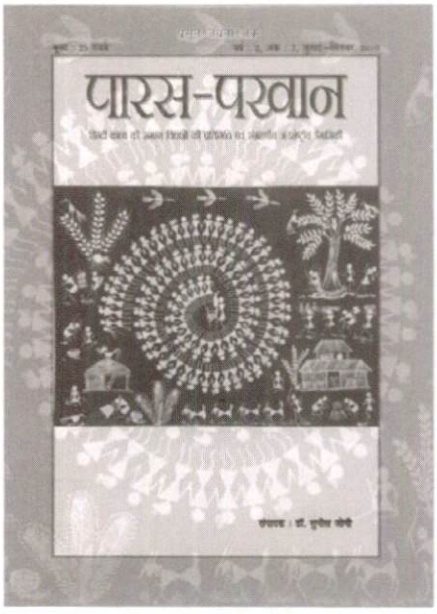

कवियों की रचनाएं भी प्रकाशित करते हैं। अतः आपसे अनुरोध है कि अपने आगामी अंक में हिन्दी भाषा की उत्कृष्टतम रचनाकार महादेवी की रचना अवश्य प्रकाशित करें।

आपने इस बार के अंक में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविता 'तोड़ती पत्थर' प्रकाशित की है। यह कविता मेरी अत्यधिक प्रिय कविता है। मैंने इसे कभी बी.ए. के पाठ्यक्रम में पढ़ा था। आज इसे पुनः पढ़ना बड़ा सुखकर लगा और अपने आप को पत्र लिखने से नहीं रोक पाई। आशा है आप इसी तरह अच्छी-अच्छी कविताएं प्रकाशित करते रहेंगे।

रीता सक्सेना, फतेहगढ़, फर्रूखाबाद, उत्तर प्रदेश

पारस पखान पत्रिका में प्रकाशित कविताओं के नीचे आपने छोटे-छोटे काव्यपद और शेर प्रकाशित किए हैं, उनके लिए वाह-वाह। अब मुझे *पारस-पखान* पत्रिका का हर तिमाही इसलिए अधिक इंतजार रहता है ताकि जैसे ही पत्रिका हाथ में आए, मैं उसमें छपी रचनाओं के साथ शेरो-शायरी का लुत्फ उठा सकूं।

हिमांशु जायसवाल, रानीकटरा चौक, लखनऊ

बाबू जी तेरे वियोग में

– डॉ. अनिल कुमार पाठक

बाबू जी तेरे ही वियोग में,
आमों में बौर नहीं आये।
केवल पतझड़ चहुँ ओर हुआ,
नहि बसंत कहीं बगराये।
गैया रोये, मैया रोये,
भैया रोये, रोये बहना।
बेटा-बेटी, नाती-पोते,
सूना पड़ा तेरा अँगना।
मेरी माँ का रूप बना जो,
कैसे उसको कोई बतलाये।
बाबू जी तेरे ही...

सब कुछ वही, रहा वैसे,
पर प्राण-तत्त्व तो चला गया।
दिखे नहीं यह परिवर्तन,
पर सार तत्त्व तो चला गया।
रीता अब अपना जीवन,
कैसे अब यह भर पाये।
बाबू जी तेरे ही...

हे प्राण तत्त्व! हे सार तत्त्व!
तुम जीवन थे इस काया के।
हे सूत्रधार! हे कर्णधार!
अपनी इस सारी माया के।
बाबू अब संभल नहीं पाती,
बिन आप राह को दिखलाये।
बाबू जी तेरे ही...

किसान

– पं. पारस नाथ पाठक प्रसून

ये भूखे जर्जर किसान
बर्बर मानवता के निशान
खेतों पर मेहनत करते
कड़ी धूप में जलते
अपनी बहती स्वेद बूंद से
खेतों का मृदु सिंचन करते
केवल दो दाने को
या धनपतियों की भूख मिटाने को
पर बदले में यही त्याग
बर्बर मानव का यही राग।

खूनों से होने दो आज फाग
इनके बच्चों का यही साज
इनके जीवन का यही राज
मरने दो भूखों उसे आज
निर्धन को मिलता यही ब्याज
कैसे होता जीवन का वैभव-विलास
महलों में कैसे होता हुलास
ये अब तक जान न पाए
केवल गम ही पाए।

भारत-दुर्दशा

– भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

रोवहु सब मिलि के आवहु भारत भाई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
सबके पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो।
सबके पहिले जेहि सभ्य विधाता कीनो।।
सबके पहिले जो रूप रंग रस भीनो।
सबके पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो।।
अब सबके पीछे सोई परत लखाई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
जहं भए शाक्य हरिचन्द नहषु ययाती।
जहं राम युधिष्ठिर वासुदेव सर्याती।।
जहं भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती।
तहं रही मूढ़ता कलह अविद्या राती।।
अब जहं देखहु तहं दुख ही दुख दिखाई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
लरि वैदिक जैन डुबाई पुस्तक सारी।
करि कलह बुलाई जवन सैन पुनि भारी।।
तिन नासी बुधि बल विद्या धन बहु वारी।
छाई अब आलस कुमति कलह अंधियारी।
भये अंध पंगु सब दीन हीन बिलखाई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
अंगरेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन बिदेस चलि जात इहै अति ख्वारी।
ताहू पै महंगी काल रोग विस्तारी।
दिन-दिन दूनो दुख ईस देत हा हारी।
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।

आँसू

(काव्यांश)

– जयशंकर प्रसाद

इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती?

आती है शून्य क्षितिज से
क्यों लौट प्रतिध्वनि मेरी
टकराती बिलखाती सी
पगली सी देती फेरी?

क्यों व्यथित व्योमगंगा सी
छिटका कर दोनों छोरें
चेतना तरंगिनी मेरी
लेती है मृदुल हिलोरें?

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति सी छायी
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आयी।

मेरे क्रन्दन में बजती
क्या वाणी, जो सुनते हो
धागों से इन आंसू के
निज करुणापट बुनते हो।

रो-रोकर सिसक-सिसक कर
कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी।

मैं बल खाता जाता था
मोहित बेसुध बलिहारी
अंतर के तार खिंचते थे
तीखी थी तान हमारी।

घिर जातीं प्रलय घटाएं
कुटिया पर आ कर मेरी
तम चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अंधेरी।

बिजली माला पहने फिर
मुसकाता था आंगन में
हां, कौन बरस जाता था
रस बूंद हमारे मन में?

तुम सत्य रहे चिर सुन्दर!
मेरे इस मिथ्या जग के
थे केवल जीवन संगी
कल्याण कलित इस मग के

गौरव था, नीचे आये
प्रियतम मिलने को मेरे
मैं इठला उठा अकिंचन
देखे ज्यों स्वप्न सबेरे।

मधु राका मुसक्याती थी
पहले देखा जब तुमको
परिचित से जाने कब के
तुम लगे उसी क्षण हमको।

मैं अपलक इन नयनों से
निरखा करता उस छवि को
प्रतिभा डाली भर लाता
कर देता दान सुकवि को।

भारत माता

– सुमित्रानंदन पंत

भारत माता
ग्रामवासिनी!
खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा फैला है श्यामल
गंगा-यमुना में आँसू जल
मिट्टी की प्रतिमा
उदासिनी!
दैत्य जड़ित अपलक नत चितवन,
अधरों में चिर नीरव रोदन,
युग-युग के तम से विषण्ण मन,
वह अपने घर में
प्रवासिनी!
तीस कोटि संतान नग्न तन,
अर्ध क्षुधित, शोषित निरस्त्र जन,
मूढ़, असभ्य, अशिक्षित, निर्धन,
नत मस्तक
तरु तल निवासिनी!
स्वर्ग शस्य पद-पदतल लुंठित,
धरती-सा सहिष्णु मन कुंठित,
क्रंदन कंपित अधर मौन स्मित,
राहु ग्रसित
शरदेन्दु हासिनी!
चिंतित भृकुटि-क्षितिज, तिमिरांकित,
नमित नयन नभ, वाष्पाच्छादित,
आनन श्री छाया शशि उपमित,
ज्ञान मूढ़
गीता प्रकाशिनी!
सकल आज उसका तन संयम,
पिला, अहिंसा स्तन्य सुधोपम,
हरती जन मन, भय, भव तम भ्रम,
जग जननी
जीवन विकासिनी!

मैं नीर भरी दुख की बदली

– महादेवी वर्मा

मैं नीर भरी दुख की बदली!

स्पन्दन में चिर निस्पन्द बसा,
क्रन्दन में आहत विश्व हँसा,

नयनों में दीपक से जलते
पलकों में निर्झरिणी मचली!

मेरा पग पग संगीत भरा,
श्वासों से स्वप्न-पराग झरा,

नभ के नव रंग बुनते दुकूल,
छाया में मलय-बयार पली!

मैं क्षितिज-भृकुटि पर घिर धूमिल
चिन्ता का भार बनी अविरल,

रज-कण पर जल-कण हो बरसी
नवजीवन-अंकुर बन निकली!

पथ को न मलिन करता आना,
पद-चिह्न न दे जाता जाना,

सुधि मेरे आगम की जग में
सुख की सिहरन हो अन्त खिली!

विस्तृत नभ का कोई कोना,
मेरा न कभी अपना होना,

परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली।

एक चिड़ा और एक चिड़ी की कहानी

– जयप्रकाश नारायण

एक था चिड़ा और एक थी चिड़ी
एक नीम के दरख़्त पर उनका था घोंसला
बड़ा गहरा प्रेम था दोनों में
दोनों साथ घोंसले से निकलते
साथ चारा चुगते,
या कभी-कभी चारे की कमी होने पर
अलग-अलग भी उड़ जाते।
और शाम को जब घोंसले में लौटते
तो तरह-तरह से एक-दूसरे को प्यार करते
फिर घोंसले में साथ सो जाते।

एक दिन आया
शाम को चिड़ी लौट कर नहीं आई
चिड़ा बहुत व्याकुल हुआ।
कभी अन्दर जा कर खोजे
कभी बैठ कर चारों ओर देखे,
कभी उड़के एक तरफ, कभी दूसरी तरफ
चक्कर काट के लौट आवे।
अँधेरा बढ़ता जा रहा था,
निराश हो कर घोंसले में बैठ गया,
शरीर और मन दोनों से थक गया था।

उस रात को चिड़े को नींद नहीं आई
उस दिन तो उसने चारा भी नहीं चुगा
और बराबर कुछ बोलता रहा,
जैसे चिड़ी को पुकार रहा हो।
दिन-भर ऐसा ही बीता।
घोंसला उसको सूना लगे,
इसलिए वहाँ ज्यादा देर रुक न सके
फिर अँधेरे ने उसे अन्दर रहने को मजबूर किया,
दूसरी भोर हुई।

फिर चिड़ी की वैसी ही तलाश,
वैसे ही बार-बार पुकारना।

एक बार जब घोंसले के द्वार पर जा बैठा था
तो एक नयी चिड़ी उसके पास आकर बैठ गई
और फुदकने लगी।
चिड़े ने उसे चोंच से मार-मार कर भगा दिया।

फिर कुछ देर बाद चिड़ा उड़ गया
और उड़ता ही चला गया
उस शाम को चिड़ा लौट कर नहीं आया
वह घोंसला अब पूरा वीरान हो गया
और कुछ ही दिनों में उजड़ गया।

कुछ तो हवा ने तय किया
कुछ दूसरी चिड़िया चोंचों में
भर-भर के तिनके और पत्तियाँ
निकाल ले गईं।

अब उस घोंसले का नामोनिशां भी मिट गया
और उस नीम के पेड़ पर
चिड़ा-चिड़ी के एक दूसरे जोड़े ने
एक नया घोंसला बना लिया।

(9 सितम्बर 1975, 'मेरी जेल डायरी' से)

रात भी, नींद भी, कहानी भी
हाय क्या चीज है जवानी भी
–फिराक गोरखपुरी

आज के बिछुड़े

– पं. नरेन्द्र शर्मा

आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?
आज से दो प्रेम योगी, अब वियोगी ही रहेंगे!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

सत्य हो यदि, कल्प की भी कल्पना कर, धीर बाँधू,
किन्तु कैसे व्यर्थ की आशा लिये, यह योग साधूँ!
जानता हूँ, अब न हम तुम मिल सकेंगे!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

आयेगा मधुमास फिर भी, आयेगी श्यामल घटा घिर,
आँख भर कर देख लो अब, मैं न आऊँगा कभी फिर!
प्राण तन से बिछुड़ कर, कैसे रहेंगे!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

अब न रोना, व्यर्थ होगा, हर घड़ी आँसू बहाना,
आज से अपने वियोगी, हृदय को हँसना सिखाना,
अब न हँसने के लिए, हम तुम मिलेंगे!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

आज से हम तुम गिनेंगे एक ही नभ के सितारे
दूर होंगे पर सदा को, ज्यों नदी के दो किनारे
सिन्धुतट पर भी न जो दो मिल सकेंगे!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

तट नदी के, भग्न उर के, दो विभागों के सदृश हैं,
चीर जिनको, विश्व की गति बह रही है, वे विवश है!
आज अथइति पर न पथ में, मिल सकेंगे!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

यदि मुझे उस पार के भी मिलन का विश्वास होता,
सच कहूँगा, न मैं असहाय या निरुपाय होता,
किन्तु क्या अब स्वप्न में भी मिल सकेंगे?
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

आज तक हुआ सच स्वप्न, जिसने स्वप्न देखा?
कल्पना के मृदुल कर से मिटी किसकी भाग्यरेखा?
अब कहाँ सम्भव कि हम फिर मिल सकेंगे!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

आह! अन्तिम रात वह, बैठी रहीं तुम पास मेरे,
शीश कांधे पर धरे, घन कुन्तलों से गात घेरे
क्षीण स्वर में कहा था, 'अब कब मिलेंगे?'
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

'कब मिलेंगे,' पूछता मैं, विश्व से जब विरह कातर,
'कब मिलेंगे,' गूँजते प्रतिध्वनि निनादित व्योम सागर,
'कब मिलेंगे,' प्रश्न उत्तर 'कब मिलेंगे'!
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?

दुश्मनों ने तो दुश्मनी की है
दोस्तों ने भी क्या कमी की है
—नरेश कुमार 'शाद'

कारवाँ गुजर गया

– गोपालदास नीरज

स्वप्न झरे फूल से,
मीत चुभे शूल से,
लुट गये सिंगार सभी बाग के बबूल से,
और हम खड़े-खड़े बहार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

नींद भी खुली न थी कि हाय धूप ढल गई,
पाँव जब तलक उठे कि जिन्दगी फिसल गई,
पातपात झर गये कि शाख-शाख जल गई,
चाह तो निकल सकी न, पर उमर निकल गई,
गीत अश्क बन गए,
छंद हो दफन गए,
साथ के सभी दिए धुआँ-धुआँ पहन गये,
और हम झुके-झुके,
मोड़ पर रुके-रुके,
उम्र के चढ़ाव का उतार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

क्या शबाब था कि फूल-फूल प्यार कर उठा,
क्या सुरूप था कि देख आईना सिहर उठा,
इस तरफ जमीन उठी तो आसमान उधर उठा,
थाम कर जिगर उठा कि जो मिला नजर उठा,
एक दिन मगर यहाँ,
ऐसी कुछ हवा चली,
लुट गयी कली-कली कि घुट गयी गली-गली,
और हम लुटे-लुटे,
वक्त से पिटे-पिटे,
साँस की शराब का खुमार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

हाथ थे मिले कि जुल्फ चाँद की सँवार दूँ,
होंठ थे खुले कि हर बहार को पुकार दूँ,
दर्द था दिया गया कि हर दुखी को प्यार दूँ,
और साँस यूँ कि स्वर्ग भूमी पर उतार दूँ,
हो सका न कुछ मगर,
शाम बन गई सहर,
वह उठी लहर कि दह गए किले बिखर-बिखर,
और हम डरे-डरे,
नीर नयन में भरे,
ओढ़कर कफन, पड़े मजार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

माँग भर चली कि एक, जब नई-नई किरन,
ढोलकें धुमुक उठीं, ठुमक उठे चरन-चरन,
शोर मच गया कि लो चली दुल्हन, चली दुल्हन,
गाँव सब उमड़ पड़ा, बहक उठे नयन-नयन,
पर तभी जहर भरी,
गाज एक वह गिरी,
पुँछ गया सिंदूर तार-तार हुई चूनरी,
और हम अजान से,
दूर के मकान से,
पालकी लिये हुए कहार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

दो चार बार हम जो कभी हँस-हँसा लिए
सारे जहाँ ने हाथ में पत्थर उठा लिए
—कुँअर बेचैन

काजू भुनी प्लेट में, व्हिस्की गिलास में

– अदम गोंडवी

काजू भुनी प्लेट में, व्हिस्की गिलास में
उतरा है रामराज विधायक निवास में

पक्के समाजवादी हैं, तस्कर हों या डकैत
इतना असर है ख़ादी के उजले लिबास में

आजादी का वो जश्न मनायें तो किस तरह
जो आ गए फुटपाथ पर घर की तलाश में

पैसे से आप चाहें तो सरकार गिरा दें
संसद बदल गयी है यहाँ की नख़ास में

जनता के पास एक ही चारा है बगावत
यह बात कह रहा हूँ मैं होशो-हवास में।

वो भी मेरे पास से गुज़रा इसी अंदाज से
मैंने भी जाहिर किया, जैसे उसे देखा न हो
–नौबहार 'साबिर'

सारा देश हमारा

– बाल कवि बैरागी

केरल से करगिल घाटी तक
गौहाटी से चौपाटी तक
सारा देश हमारा।

जीना हो तो मरना सीखो
गूँज उठे यह नारा
केरल से करगिल घाटी तक
सारा देश हमारा।

लगता है ताज़े लोहू पर जमी हुई है काई
लगता है फिर भटक गई है भारत की तरुणाई
काई चीरो ओ रणधीरो!
ओ जननी की भाग्य लकीरो!
बलिदानों का पुण्य मुहूरत आता नहीं दुबारा

जीना हो तो मरना सीखो गूँज उठे यह नारा–
केरल से करगिल घाटी तक
सारा देश हमारा।

घायल अपना ताजमहल है, घायल गंगा मैया
टूट रहे हैं तूफानों में नैया और खिवैया
तुम नैया के पाल बदल दो
तूफ़ानों की चाल बदल दो
हर आँधी का उत्तर हो तुम, तुमने नहीं विचारा

जीना हो तो मरना सीखो गूँज उठे यह नारा–
केरल से करगिल घाटी तक
सारा देश हमारा।

कहीं तुम्हें परबत लड़वा दे, कहीं लड़ा दे पानी
भाषा के नारों में गुप्त है, मन की मीठी बानी
आग लगा दो इन नारों में
इज़्ज़त आ गई बाजारों में
कब जागेंगे सोये सूरज! कब होगा उजियारा

जीना हो तो मरना सीखो गूँज उठे यह नारा–
केरल से करगिल घाटी तक
सारा देश हमारा।

संकट अपना बाल सखा है, इसको कंठ लगाओ
क्या बैठे हो न्यारे-न्यारे मिलकर बोझ उठाओ
भाग्य भरोसा कायरता है
कर्मठ देश कहाँ मरता है?

सोचो तुमने इतने दिन में कितनी बार हुँकारा
जीना हो तो मरना सीखो गूँज उठे यह नारा–
केरल से करगिल घाटी तक
सारा देश हमारा।

लोग हर मोड़ पे रुक-रुक के सँभलते क्यूँ हैं
इतना डरते हैं तो फिर घर से निकलते क्यूँ हैं
–राहत इन्दौरी

गुमशुदा

– मंगलेश डबराल

शहर के पेशाबघरों और अन्य लोकप्रिय जगहों में
उन गुमशुदा लोगों की तलाश के पोस्टर
अब भी चिपके दिखते हैं
जो कई बरस पहले दस बारह साल की उम्र में
बिना बताए घरों से निकले थे
पोस्टरों के अनुसार उनका कद मँझोला है
रंग गोरा नहीं गेहुँआ या साँवला है
हवाई चप्पल पहने हैं
चेहरे पर किसी चोट का निशान है
और उनकी माँएँ उनके बग़ैर रोती रहती हैं
पोस्टरों के अंत में यह आश्वासन भी रहता है
कि लापता की ख़बर देने वाले को मिलेगा
यथासंभव उचित ईनाम

तब भी वे किसी की पहचान में नहीं आते
पोस्टरों में छपी धुँधली तस्वीरों से
उनका हुलिया नहीं मिलता
उनकी शुरुआती उदासी पर
अब तकलीफें झेलने की ताब है
शहर के मौसम के हिसाब से बदलते गए हैं उनके चेहरे
कम खाते कम सोते कम बोलते
लगातार अपने पते बदलते
सरल और कठिन दिनों को एक जैसा बिताते
अब वे एक दूसरी ही दुनिया में हैं
कुछ कुतूहल के साथ
अपनी गुमशुदगी के पोस्टर देखते हुए
जिन्हें उनके माता-पिता जब-तब छपवाते रहते हैं
जिनमें अब भी दस या बारह
लिखी होती है उनकी उम्र।

वो नहीं मेरा मगर

– दीप्ति नवल

वो नहीं मेरा मगर उससे मुहब्बत है तो है
ये अगर रस्मो-रिवाजों से बगावत है तो है

सच को मैंने सच कहा, जब कह दिया तो कह दिया
अब जमाने की नजर में ये हिमाकत है तो है

कब कहा मैंने कि वो मिल जाए मुझको, मैं उसे
गैर न हो जाये वो बस इतनी हसरत है तो है

जल गया परवाना तो शम्मा की इसमें क्या ख़ता
रात भर जलना-जलाना उसकी किस्मत है तो है

दोस्त बन कर दुश्मनों-सा वो सताता है मुझे
फिर भी उस जालिम पे मरना अपनी फितरत है तो है

दूर थे और दूर हैं हरदम जमीनों-आसमाँ
दूरियों के बाद भी दोनों में कुर्बत* है तो है

शब्दार्थ :
*सामीप्य

सुना है उन्हें भी हवा लग गई
हवाओं के रुख जो बदलते रहे
–बशीर बद्र

तुम क्या दोगे देश को?

– वीरेन्द्र प्रकाश गुप्त 'अंशुमाली'

तुम्हें दिया है जन्म देश ने,
तुम क्या दोगे देश को?
यदि चाहो तो बदल सकोगे,
इस धूमिल परिवेश को।
वे पुरखे थे दिए जिन्होंने, स्वर्ण पृष्ठ इतिहास को।
कीर्तिमान की ऊँचाई दी, निष्ठा को, विश्वास को।
धर्म न त्यागा, तजा न धीरज, किया समर्पित प्राण को।
सब कुछ गवाँ निभाते आए, रण वीरों की आन को।
अपनाएगा कहो कौन,
फिर उस दीवाने वेश को।
चले पहन बासन्ती चोला, क्रान्ति ज्वार की चाह में।
कुछ करने या मर मिटने को, अँगारों की राह में।
मुझे खून दो बदले में मैं, तुमको दूँगा आजादी।
बोल उठी जय-हिन्द एक स्वर, दासी, रानी, शहजादी।
वही रक्त ले कौन लिखेगा,
फिर अध्याय विशेष को।
जिसके रजकण की महिमा से, तेज पुँज यह दीपित तन।
सलिल सुधा पी पीकर जिसकी, गर्वोन्नत हो जाता मन।
जिसके वन उपवन गिरि झरने, आकर्षित कर लेते हैं।
कहीं रहें हम किन्तु सदा वे, नेह निमन्त्रण देते हैं।
क्या कृतघ्न बन अनदेखा,
कर दोगे इस सन्देश को।
कहीं जातियों, भाषाओं के, धर्मों के उन्माद में।
खींच रहे आँगन दीवारें, भटके राह प्रमाद में।
राजनीति की फसल उगाई, पढ़े पहाड़े ध्वंस के।
दुश्मन बनते स्वयं आज हम, अपने मानव वंश के।
कौन भीष्म बनकर बदलेगा,
व्यथा, वेदना, क्लेश को।
तुम्हें दिया है जन्म देश ने
तुम क्या दोगे देश को।।

ताना बाना

– उदय प्रकाश

हम हैं ताना, हम हैं बाना।
हमीं चदरिया, हमीं जुलाहा, हमीं गजी, हम थाना।

नाद हमीं, अनुनाद हमीं, निःशब्द हमीं, गंभीरा
अंधकार हम, चंदा-सूरज हम, हम कान्हां, हम मीरा।
हमीं अकेले, हमीं दुकेले, हम चुग्गा, हम दाना।

मंदिर-मस्जिद, हम गुरुद्वारा, हम मठ, हम बैरागी
हमीं पुजारी, हमीं देवता, हम कीर्तन, हम रागी।
आखत-रोली, अलख-भभूती, रूप धरें हम नाना।

मूल-फूल हम, रुत बादल हम, हम माटी, हम पानी
हमीं यदूही-शेख-बरहमन, हरिजन हम खिस्तानी।
पीर-अघोरी, सिद्ध औलिया, हमीं पेट, हम खाना।

नाम-पता ना ठौर-ठिकाना, जात-धरम ना कोई
मुलक-खलक, राजा-परजा हम, हम बेलन, हम लोई।
हम ही दुलहा, हमीं बाराती, हम फूंका, हम छाना।

हम हैं ताना, हम हैं बाना।
हमीं चदरिया, हमीं जुलाहा, हमीं गजी, हम थाना।

चाहे सोने के फ्रेम में जड़ दो
आईना झूठ बोलता ही नहीं
–कृष्ण बिहारी नूर

देख प्रकृति की ओर

– शास्त्री नित्यगोपाल कटारे

मन से देख प्रकृति की ओर।
क्यों दिखती कुम्हलाई संध्या
क्यों उदास है भोर।
देख प्रकृति की ओर।

वायु प्रदूषित नभ मंडल दूषित नदियों का पानी
क्यों विनाश आमंत्रित करता है मानव अभिमानी
अंतरिक्ष व्याकुल-सा दिखता बढ़ा अगर्नल शोर
देख प्रकृति की ओर।

कहाँ गए आरण्यक लिखने वाले मुनि संन्यासी
जंगल में मंगल करते वे वन्यपशु वनवासी
वन्यपशु नगरों में भटके वन में डाकू चोर
देख प्रकृति की ओर।

निर्मल जल में औद्योगिक मल बिल्कुल नहीं बहाएँ
हम सब अपने जन्मदिवस पर एक-एक पेड़ लगाएँ
पर्यावरण सुरक्षित करने पालें नियम कठोर
देख प्रकृति की ओर।

जैसे स्वस्थ त्वचा से आवृत्त रहे शरीर सुरक्षित
वैसे पर्यावरण सृष्टि में सब प्राणी संरक्षित
क्षिति जल पावक गगन वायु में रहे शांति चहुँओर
देख प्रकृति की ओर।

बताओ हिज्र के लम्हो! मैं कैसे घुट के मर जाऊँ
सितम की चाह बाक़ी है, अभी महबूब के दिल में
–शिवकुमार बिलग्रामी

ग़जल

– सर्वेश चन्दौसवी

वो लिख रहा था ख़त भी नई दास्तान सा
ग़म जिसमें चीख़ता था किसी बद़जुबान सा

जिसमें रिवायतों को मिले एहतराम आज
बस्ती में था न कोई मेरे मकान सा

उसको हटा न पायेगा कोई किसी तरह
वो रास्ते में सच के अभी है चटान सा

छाया हुआ जो रहता है मेरे यक़ीन पर
तू है, तेरा ख़्याल है लेकिन गुमान सा

ऐसी बला की धूप कि चलना मुहाल है
ठहरूं तो जब कि आये नज़र सायेबान सा

जिसमें कि तैरतीं हैं कई छोटी मछलियां
दिल मेरा आजकल है उसी मर्तबान सा

वो लौट कर न आयेगा मेरी हयात में
मैंने सुना तो मुझपे गिरा आसमान सा

हालात माना सख़्त थे, दर पर अमीर के
खुद्दार कब था वो जो झुका था कमान सा

उससे ही पूछना है हुनर रख-रखाव का
'सर्वेश' जो बुजुर्ग मिले नौजवान सा

मौत ही इन्सान की दुश्मन नहीं
ज़िंदगी भी जान लेकर जायेगी
–'जोश' मलीहाबादी

नेहरू के प्रति

– जे.पी. तिवारी

ओ शांतिदूत, ओ तपःपूत!
जननी के स्वागत गायन के अग्रदूत!
भारत विशाल गरिमा अनूप
जन मानस मंजु मराल भूप
तुमसे थी हुई क्रांति
मिट गई अनेकों विषम भ्रांति।

तुम गए नहीं विश्राम लिया
नश्वर शरीर का दान दिया
खेतों-खलिहानों में बिखर गए
गंगा-यमुना में हहर गए
बन राख रिचाएं जागेंगी
वह रोज जवाहर मांगेंगी।

माता की गोद भरे कब से
हो लाल अनेक जवाहर से
विश्वास करो अपने मन में
क्या मांग गया जन-जन से
तुम बनो देश के कर्णधार
अब करो प्रतिज्ञा तन-मन से।

रस्मे-उल्फ़त सिखा गया कोई
दिल की दुनिया बसा गया कोई
–दाग़

क्या गाएं

– चंद्रभानु मिश्र

सभी जगह कोहराम मचा है, बोलो हम क्या गाएं,
दिशा दे सकें जो समाज को, बहती नहीं हवाएं।

नकली लोग हुए सम्मानित, असली पाते गाली
प्रतिभाओं के घर में बैठी, बन ठन कर कंगाली,
अनुवादक है हुक़्म चलाते, मौलिक मांजे थाली,
डुप्लीकेट नौकरी बांटे, रहें ऑरिजनल खाली,
नैतिकता का रोना सुनकर, कैसे हम मुस्काएं।

गुण्डों के आगे संतों की बंद हो गई बोली,
इक के पीछे भीड़ लगी है, इक की गायब टोली
फूलों को कांटे उग आए, दुष्ट लगाए रोली
संस्कृति के सारे उद्धारक बांट रहे हैं गोली,
सत्ता अपने अंक बटोरे, नित कौरवी सभाएं।

पढ़ लिखकर भी नहीं हो रहे, लोग यहां पर ज्ञानी,
चांदी में ये रेत लगाना, किसकी कारस्तानी,
खेत और खलिहान सह रहे, केवल आंधी-पानी,
मांगा जिससे नहीं कभी कुछ, बनते वे सब दानी,
जूठन बीन रहीं सड़कों पर, भारत की प्रतिभाएं।

पुत्रवधू पुरवाई जैसी, सास लगे अमराई,
पतझड़ वाले वृक्ष पिताजी, शुष्क नदी-सा भाई,
वक्त पड़े पर आंसू मिलते, मिलती नहीं भलाई
जैसे किसी पुराने गड्ढे से, न फटे है काई,
संबंधों के अर्थ नहीं वे, नहीं रहीं संज्ञाएं।

तो क्यूं कुछ कहा नहीं?

– शिवकुमार बिलग्रामी

मां के कुछ
अपने अनुभव थे
अपने सच थे
अपनी बातें थीं
अक्सर वो समझती थीं–
'क्यों अपनी शक्ति खोते हो?
टीलों को घिसना
काम हवाओं का।'
या कहती थीं–
'चुप रहो
और खुश रहो'

वो उनके अपने सच थे
अपने अनुभव थे
उनके सच को तुमने
क्यूं अपना सच माना
अपने सच को तुमने
क्यूं न जाना
तुम कुछ कहने को थीं
तो क्यूं कुछ कहा नहीं
चुप रहने से क्या कोई
खुश रहता है?

अगर जा रहे हो, तो जाने से पहले
कोई ज़ख्म दे दो, निशानी रहेगी
–नूर इन्दौरी

अपूर्णता

– नवीन कुमार झा

पारमेष्ठ्य समुद्र था,
दिव्य चेतना का जल
लहरा रहा था।
कहीं कुछ शेष नहीं,
केवल था अनंत शेष
एक बटा तीन पर लीन।
महाकाश था तो प्रणव
गूँज रहा था।
शेष से विशेष होना चाहा–
हलचल हुई
क्रियमाण इच्छा से।
कमल आया हिरण्यगर्भ आया,
साथ-साथ ही
विधाता आए।
ऊपर देखा–आसमान में
अनंत तारे छा गए
टिम-टिम, छिन-छिन।
नीचे देखा–धरती पर
जलचर, पादप आए।
मानव भी आए, पर
अंत में।
विधाता मुस्कुरा रहे थे
अपने नन्हे मानव को देखकर
उसकी मृदुता देखकर
क्रीड़ा देखकर
हवायें दुलरा रही थीं अपनी
कोमल उंगलियों से।
दिशायें कवच हो गई थीं,
लहरें हिंडोला हो गई थीं,
पादप पिता हो गए थे,
पखेरू दोस्त,
जानवर भाई।
मछलियाँ नौकाएं
प्रसन्न थे सब–
मानव के नन्हें कदमों को चूमकर
पृथ्वी सिहा रही थी,
आकाश मुस्कुरा रहा था।
तभी–एक तारा टूटा
सारी सृष्टि की आँखों का तारा,
प्यारा, दुलारा।
छोटा-सा चमकीला।
सचमुच लघिमा एवं लावण्य की
सिद्धि थी उसमें।
हवायें थम गईं,
लहरें शांत हो गईं,
दिशायें वीरान हो गईं,
पादप, पखेरू, जानवर, मछलियाँ
सभी उदास हो गए–
मानव के नन्हे चरणों की चपलता भी।
आकाश सूना था–
सबने छान मारा,
सर्वत्र।
शिशु मानव ने मस्तिष्क की
मिट्टी से बर्तन बनाया,
पृथ्वी ने अपने हृदय का
रस दिया–आकाश ने
बाती दी–रुई की सफेद-सी।
पेड़ों ने अपने रस-रक्त से
आग उत्पन्न की।
बस तैयार हो गया
चिराग
सूनी जगह में रखा गया–
पर बात वो नहीं आई
जो दिव्य तारे में थी।

सूनापन तो नहीं था–मगर
थी कुछ-कुछ कमी।
खोज जारी रही–
बल्ब आए, ट्यूब लाइट
वेयर लाइट और न जाने क्या-क्या?
पर, कमी फिर भी रही।
तेज रफ्तार से सभी खोज
रहे हैं–उस अपूर्णता को
भरने के लिए।
अभी भी
आपने देखा होगा–हवाओं को
भागते हुए–दिशाओं को
रोते हुए आठ-आठ आँसू।
पृथ्वी को काले-काले
तरल पदार्थ भी उगलते हुए
तभी चिरायंध-सी गंध
आती है, धुआँ भी दिखाई देता है।
कोई झुलस रहा है, कोई जल रहा है–
देखा तो पेड़ की दो-चार जवान टहनियाँ थीं,
पास में खड़ा बूढ़ा बरगद, उसे फूँक मार-मार
कर सहला रहा था।
उसे हिम्मत बँधा रहा था–
घबड़ाओ नहीं। खोज जारी रखो–
सभी जगह वीरानी आ रही थी।
महल भी खोज में था,
झोपड़ियां भी।
सभी खोज रहे थे सभी।
तभी–एक तारा झिलमिलाया, फुसफुसाया
दूसरे के कान में
बाहरी खोज है व्यर्थ
कहीं कुछ मिलने वाला नहीं
सभी अचेतन अज्ञानी हैं–
क्या इस सृष्टि का अणु-अणु
स्वयं में पूर्ण नहीं है?

जमाने में उसने बड़ी बात कर ली
खुद अपने से जिसने मुलाक़ात कर ली
–शेरी भोपाली

नवजीवन

– राकेश कौशिक

नवजीवन तुमने दिया, प्रिये।

जीवन का अर्थ नया जाना,
जब मैंने तुमको पहचाना,
सागर मन को मेरे सरिता-सा
चंचल तुमने किया, प्रिये।
नवजीवन तुमने दिया, प्रिये।

आशाओं ने करवट बदली,
हो गई दूर दुःख की बदली
गूंगी पीड़ा को भाषा दे
घावों को मन के सिया, प्रिये।
नवजीवन तुमने दिया, प्रिये।

मेरी आराध्य बनीं अब तुम,
साधक हूँ साध्य बनीं अब तुम,
अमृत भूला मैं जब मधु का
तेरे अधरों को पिया, प्रिये।
नवजीवन तुमने दिया, प्रिये।

इश्क़ में ख़्वाब का ख़याल किसे
न लगी आंख, जब से आंख लगी
–हयात 'हसरत'

कुछ चेहरे

– नीना मुखर्जी (सऊदी अरब)

कुछ चेहरे ऐसे देखे हैं
नाना रंगों का रूप लिए
कभी ठंडी शीतल छांव लिए
कभी ज्वलित दिए सी धूप लिए

ऊपरी सतह होती है स्थिर
पर भेदी गहरे होते हैं
अपनी लीला के भंवर में
दूजे की नाव डुबोते हैं

इस रंगबिरंगी दुनिया की
माला भी रंगी है होती
उजले मोती के ही संग संग
काले मैले भी हैं मोती

जब बनी ये चितकबरी दुनिया
खुद चित्रकार शरमा-सा गया
क्यों ऐसा रंगा मानस को
ये सोच के चक्कर खा-सा गया

अब छुपा के चेहरा बैठा है
हम ढूंढ़-ढूंढ़ उकताए हैं
क्या कहिए ऐसी रचना को
रचनाकार भी शरमाए है।

न आया हमें इश्क़ करना न आया
मरे उम्र-भर और मरना न आया
–रियाज़ ख़ैराबादी

फसादो दर्द

– **अब्बास रज़ा अल्वी** (ऑस्ट्रेलिया)

फ़सादो दर्द और दहशत में जीना
मिला यह आदमी को आदमी से

बुरा कहते हैं हम क्यों क़िस्मतों को
बढ़ी है रंजिशें अपनी कमी से

वतन ऐसा जलाया बिजलियों ने
सहम जाते हैं अब हम रोशनी से

जहां गुज़रा था एक बचपन सुहाना
वो दर छूटा है कितनी बेदिली से

न जब कोई तुम्हारे पास होगा
बहुत पछताओगे मेरी कमी से

कभी तो यह हक़ीक़त मान लोगे
तुम्हें चाहा है मैंने सादगी से

हुई सब ग़र्क वो रव्वाहिश 'रज़ा' की
सुनाएं क्या तुम्हें अपनी खुशी से

ये नाज़ो-हुस्न तो देखो कि दिल को तड़पाकर
नज़र मिलाते नहीं, मुस्कुराये जाते हैं
–'जिगर' मुरादाबादी

शत-शत नमन

– वीणा चौधरी सिंह (अमरीका)

दूर बहुत दूर
बादलों के शहर के उस पार
हिमालय की चोटी के नीचे
बसे उस देश को
उस देश की
मिट्टी की खुशबू को
गांधी और सुभाष को
नेहरू और प्रताप को
वहां की संस्कृति और परंपराओं को
मातृभूमि की मर्यादाओं को
श्रद्धा और प्रेम से
भींगी स्निग्ध हवाओं को, गर्दीले चौराहों को
सड़कों की संकीर्णताओं को
गांव की पगडंडियों को
शहर की सीमाओं को
नदियों की विशालताओं को
जिन्होंने मुझे आगे बढ़ते रहने की
मानवता और भाईचारे को
अपनाने की
वसुधैव कुटुंबकम को
आत्मसात करने की प्रेरणा दी
उस मां
मातृभाषा और मातृभूमि को
मेरा शत शत नमन!

मुट्ठियों में कांच के टुकड़े दबाकर देखिये
जब लहू रिसने लगे तो मुस्कुराकर देखिये
–सर्वेश चन्दौसवी

वो एक चाँद-सा चेहरा

– **चाँद हदियाबादी** (डेनमार्क)

वो एक चाँद-सा चेहरा जो मेरे ध्यान में है
उसी के साये की हलचल मेरे मकान में है

मैं जिसकी याद में खोया हुआ-सा रहता हूं
वो मेरी रूह में है और मेरी जान में है

वो जिसकी रौशनी से क़ायनात है जगमग
उसी के नूर की चर्चा तो कुल जहान में है

तुझे तलाश है जिस शय की मेरे पास कहाँ
तू जा के देख वो बाज़ार में दुकान में है

चला के देख ले तू बेशक मेरे सीने पर
वो तीर आखिरी जो भी तेरी कमान में है

ये ज़िन्दगी है इसे 'चाँद', सहल मत समझो
हरेक साँस यहाँ गहरे इम्तिहान में है।

मर कर तिरे ख़याल को टाले हुए तो हैं
हम जान दे के दिल को संभाले हुए तो हैं
–फ़ानी

जब भी कोई कहानी लिखना

– उषा राजे सक्सेना (ब्रिटेन)

जब भी कोई कहानी लिखना
भर के आँख में पानी लिखना

नफ़रत दूर तलक मिलती है
मुश्किल प्यार की बानी लिखना

कैसा आज लगा प्रिय तुमको
दुख को शाम सुहानी लिखना

माना वक्त नया है लेकिन
कोई बात पुरानी लिखना

मेरे गीत गजल को लोगो
मेरी कोई निशानी लिखना

जिसने प्यार दिया दुनिया को
उसको सच्चा ज्ञानी लिखना

अबकी बार उषा तुम खत में
अपने नाम के मानी लिखना

समझे न थे कि एक दिन ऐसा भी आएगा
हंसने पे अपने आप ही रोया करेंगें हम
–'उमीद' उपेठवी

समाज के ठेकेदार

– **गार्गी शर्मा** (एडवोकेट)

समाज के उन ठेकेदारों को है मेरा नमस्कार
जो करते हैं देश का धीरे-धीरे बंटाधार
बन जाते हैं जनता के दिलों के वो स्वामी
अपने काले कारनामों से भी बनते नामी गिरामी
इनके भाषणों में तो होता है पूरा चिट्ठा
जनता को मक्खन लगाना है मक़सद इनका
ये हर घड़ी हर व़क्त करते हैं वायदों की बात
पर निभाते वक्त आती है सामने इनकी औकात
वोट के नाम पर ये मांगते हैं जनता से भीख
पर जनता को देते हैं हरदम त्याग की सीख
समझ नहीं पाते हैं ये जनता का हाल
अच्छे-अच्छों का जीना करते मुहाल
समझते हैं अपने आप को देश की सरकार
मगर जनता के सपने कब होते साकार?
इस पागल जनता को भी देखो मेरे यार!
सामने करती जय जयकार, पीछे कहती हाय-हाय सरकार!

निवेदन

■ **आप मेरे ई मेल-आई डी** kavi**sunil**jogi@gmail.com **पर विज्ञापन या रचनाएं भेजकर पत्रिका की निरंतरता में अपना योगदान दे सकते हैं।**

■ **समीक्षा के लिए अपनी सद्यःप्रकाशित पुस्तक की दो प्रतियां हमें भेज सकते हैं।**

■ **यदि 'पारस-पखान' आपको पसंद है, तो उसके नियमित सदस्य बनिए। स्वयं पढ़कर और दूसरों को भी इसका सदस्य बनाकर आप हमारे अभियान में सहभागी बन सकते हैं। कम-से-कम तीन से पांच वर्ष हेतु सदस्य बनने के लिए संपादकीय कार्यालय में अपनी धनराशि प्रेषित करें।**

मत रोको मुझे

– कुँअर आमोद

मत रोको मुझे, आने दो
मैं तेरा खून, मैं तेरा अंश
तेरी ममता का एक भ्रूण
फिर क्यों मेरे लिए दंश

मैं ही सीता का पतिधर्म
मैं ही राधा के मन का मर्म
मैं ही झांसी की रानी
मैं तेरी मेहनत का एक अंग

मैं तेरी छाया का साया
मैं अपने सहोदर की राखी
मैं तेरी आंखों का तारा
मैं तेरे हाथों की लाठी

तेरे अस्तित्व का प्रकटन मैं
मैं तेरी सोई आकांक्षा
तेरे स्वत्व का एक रूप
साक्षात तेरी एक मीमांसा

तेरी साँसों की गति बनूँ
तेरी आँखों की नींद बनूँ
जिसकी छाया में लेट सको
जीवन का ऐसा पेड़ बनूँ

किसलिए षड्यंत्र बड़ा इतना
जो जन्मा नहीं अजन्मा है
अभी लिया नहीं है रंगरूप
जो कोख में एक खिलौना है

जो लोग अभी भारी निराश
चेहरे म्लान, हैं थके क्लांत
मैं मुस्कान बनूँ उनकी
सिर उठें दिशाएँ हो निशांत

तेरे आँगन की एक कली
तेरे सपनों का बीज, खाद
सींचूँगी तेरे सपनों को
मत तोड़ मुझे खिल जाने दो

मत खून बहाओ तुम मेरा
मैं एक माँस का टुकड़ा हूँ
कभी बनूँ सहारा तेरा मैं
दुनिया में मुझको आने दो
मत रोको मुझे, आने दो

बगिया में खिल जाने दो
खुशबू बनूँगी उपवन की
पौधे को उग जाने दो।

हक़ीक़त क्यों अलग है मेरी मंदिर और मस्ज़िद से
ये मिट्टी के घरौंदे हैं, मैं मिट्टी का खिलौना हूँ।
–घनीराम 'बादल'

'नीरज' को 'पारस शिखर सम्मान'

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में 25 जुलाई, 2010 को स्व. पारसनाथ पाठक 'प्रसून' की अठहत्तरवीं जयंती के अवसर पर 'प्रसून प्रतिष्ठान' की ओर से आयोजित एक समारोह में प्रख्यात गीतकार पद्मभूषण गोपाल दास 'नीरज' को 'पारस शिखर सम्मान' प्रदान किया गया। इसके साथ ही देश के युवा कवि शशिकांत 'शशि' को भी 'स्वरबेला सम्मान' से विभूषित किया गया। साहित्यकार स्व. बाबू जी पारसनाथ पाठक 'प्रसून' की स्मृति में प्रदान किये जाने वाले इस सम्मान समारोह के मुख्य अतिथि राज्यपाल श्री बी.एल. जोशी थे। लखनऊ के गोमतीनगर स्थित सी.एम.एस. प्रेक्षागृह में आयोजित कार्यक्रम में महामहिम राज्यपाल ने कहा कि सृजन शाश्वत है जो रचनाकारों को मुखर करता है। उन्होंने कहा कि कविता कल्पनाओं का मिलन होता है और कवि उसे अपने सृजनात्मक क्षमता से पारस के समान निर्मित कर समाज को समर्पित करता है। महामहिम ने श्री नीरज एवं श्री शशि को प्रतीक चिह्न भेंट किए तथा साल उढ़ाकर इनका सम्मान किया। कार्यक्रम के अध्यक्ष लखनऊ नगर के महापौर डॉ. दिनेश शर्मा ने भी अपने उद्‌गार व्यक्त किए तथा युवा पीढ़ी को भारतीय मूल्यों का सम्मान करने की नसीहत दी। इस अवसर पर प्रसून प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री एल.पी. पाण्डेय द्वारा सभी अतिथियों का स्वागत किया गया। इस अवसर पर स्व. प्रसून के परिवारजन, संबंधीगण तथा प्रदेश व देश के विभिन्न कवियों एवं साहित्यकारों सहित बड़ी संख्या में वरिष्ठ अधिकारीगण, संभ्रांत व प्रबुद्धजन भी उपस्थित रहे।

सम्मान समारोह के पूरक कार्यक्रम के रूप में एक कवि सम्मेलन का भी आयोजन हुआ जिसका संचालन देश के प्रख्यात कवि श्री सुनील जोगी ने किया। वरिष्ठ कवि और समारोह के मुख्य आकर्षण गोपाल दास 'नीरज' ने अपनी कविताओं से उपस्थित श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। उन्होंने अपने अंदाज में सुनाया कि–'अब तो मजहब कोई ऐसा चलाया जाए, जिसमें इंसान को इंसान बनाया जाए'। शशिकांत शशि ने अपनी चिरपरिचित ओजपूर्ण शैली में अपनी रचना प्रस्तुत की कि–'दिल में सबसे पहले हिन्दुस्तान होना चाहिए'। स्थानीय कवयित्री सुश्री सुमन दुबे ने जब सुनाया कि–'हम दिल ही नहीं जज्बात भी रखते हैं' तो श्रोतागण जज्बाती हो गए। देवल आशीष ने अपनी बात कुछ इन लफ्जों में रखी कि–'राह उन्हीं को मिलती है जो लड़ जाए तकदीरों से'। हरियाणा के सरदार मनजीत सिंह, हरियाणा से ही महेंद्र शर्मा आदि ने अपनी-अपनी प्रस्तुतियों से मन मोहा।

विदित हो कि इस अवसर पर 'प्रसून' की लिखी कविताओं की सीडी एवं कैसेट का भी विमोचन कार्यक्रम के मुख्य अतिथि, अध्यक्ष एवं मंचासीन महानुभावों द्वारा किया गया। **–संवाददाता**

इस 'नहीं' का कोई इलाज नहीं
रोज कहते हैं आप 'आज' नहीं
–दाग़

अखबारों से : पारस शिखर सम्मान

अब तो मजहब ऐसा भी च

पारसनाथ पाठक प्रसून की 78 वीं जयन्ती पर आयोजित समारोह में छा गए नीरज स्वर बेला युवा सम्मान शशिकान्त शशि को मिला

'नीरज' को 'पारस शिखर सम्मान'

साहित्यकार स्व. पारसनाथ 'प्रसून' की जयंती पर समारोह

... इंसान को इंसान बनाया जाए

नीरज को पारस शिखर सम्मान

अपना शहर

'...सूर्य के बेटे अंधेरों का समर्थन कर रहे हैं'

Neeraj gets Paras Shikhar Samman

Governor BL Joshi with Gopal Das 'Neeraj'

Pioneer News Service | Lucknow

On Sunday, Governor BL Joshi honoured eminent lyricist Padma Bhushan Gopal Das 'Neeraj' with 'Paras Shikhar Samman' in a programme organised by Prasoon Pratishthan at CMS Gomti Nagar. He also felicitated young poet from MP Shashikant 'Shashi' with 'Swar Bela Yuva Samman'.

Addressing the audience, he said the literature which could not touch hearts, it can never influence the life of a person. "Gopal Das always spread the message of fraternity and humanity through his work. The main objective of any literature is to lift the human being from the prevalent narrow-minded beliefs of caste, religion and community," the governor added.

He also said, everyone should take care of their parents, as they were the souls of Indian culture and tradition. Mayor Dinesh Sharma along with various famous poets were also present on the occasion.

अखबारों से : पारस शिखर सम्मान

राज्यपाल ने गोपाल दास नीरज और शशिकान्त को किया सम्मानित

'प्रसून' की कविताएं यादगार: बीएल जोशी

- स्वर्गीय पारस नाथ पाठक 'प्रसून' की 78 वीं जयंती समारोह
- पद्म भूषण गोपाल दास नीरज को पारस शिखर सम्मान व शशिकांत शशि को मिला स्वर बेला युवा सम्मान

'नीरज' को मिला पारस शिखर सम्मान

डॉ. गोपालदास नीरज और शशिकान्त सम्मानित

प्रसून की स्मृति में समारोह का आयोजन

स्वतंत्र चेतना

लखनऊ, सोमवार 26 जुलाई 2010 पृष्ठ 16

प्रसून प्रतिष्ठान के 'सम्मान समारोह' में राज्यपाल बीएल जोशी ने पद्मभूषण गोपाल दास नीरज को पारस शिखर सम्मान और मध्य प्रदेश के युवा कवि शशिकांत शशि को स्वर बेला युवा सम्मान से सम्मानित किया. प्रख्यात कवि और साहित्यकार पं. पारसनाथ पाठक प्रसून की स्मृति में यह कार्यक्रम सीएमएस में रविवार को आयोजित किया गया था.

स्व.पारसनाथ पाठक 'प्रसून' स्मृति समारोह सम्पन्न

राज्यपाल ने डा.गोपालदास नीरज व शिकान्त शशि को किया सम्मानित

पारस शिखर सम्मान
समारोह की कुछ झलकियाँ

पारस शिखर सम्मान
समारोह की कुछ झलकियाँ